RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-05
Issue-02
February -2020

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[Peer Reviewed Journal]

आदिवासी हिन्दी उपन्यास 'जंगल के फूल' में समाजवादी जन–चेतना

[1]डॉ. करतार सिंह; [2]कान्ति देवी मीना

[1]सह आचार्य हिन्दी विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर (राज.)
[2]शोधार्थी हिन्दी विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)

ARTICLE DETAILS
Article History
Published Online: 16 Feb 2020

Keywords
जंगल के फूल, समाजवाद, जनचेतना, आदिवासी, उपन्यास।

ABSTRACT
समाजवादी जनचेतना पाश्चात्य साहित्य से प्रभावित है। 'समाजवाद' और 'जनवादी' ये दोनों शब्द का अर्थ समान होता है। समाजवादी जनचेतना की सर्व सम्मत परिभाषा करना कठिन है क्योंकि जनचेतना को पाश्चात्य तथा भारतीय मनीषियों ने अपने–अपने मतों के अनुसार परिभाषित किया है। जनचेतना कला, साहित्य और जीवन के विशिष्ट दृष्टिकोण है, जो जनसामान्य को महत्व देता है। मार्क्स ने समाज और उसके विविध रूपों की जो व्याख्या की वह कला और साहित्य को लागू होती है। समाजवादी जनचेतना का वास्वविक अर्थ है साम्रज्यवादी, पूंजीवाद और पीड़ित जन के साथ वास्तविक हमदर्दी। जनवादी चेतना यानी की समाजवादी चेतना का लक्ष्य सामंतीय व्यवस्था का विरोध करते हुए सामान्य वर्ग के प्रति मानवमात्र में सहानुभूति पैदा करना, आम जनता को शिक्षित करते हुए उनके सांस्कृतिक विकास के लिए प्रयास करता है और उनके संघर्षात्मक जीवन को आवाज देकर उनके जीवन मूल्यों में परिवर्तन निर्माण करना रहा है। हर युग के श्रेष्ठ का दृष्टिकोण भी जनवादी समाज की ओर रहा है। समाजवादी जनचेतना को लेकर चलने वाले साहित्य में मानव के सामुहिक भावों की अभिव्यक्ति हुई है। जंगल के फूल उपन्यास में श्री राजेन्द्र अवस्थी ने 'बस्तर' जनपद के 'गढ़ बंगाल' और 'बिंझली' गांवों के आदिवासियों की संस्कृति, रीति–रिवाज, आचार–विचार आदि का जीवंत चित्रण प्रस्तुत किया है। इसकी कथा महुआ और सुलकसाये के 'गढ़बंगाल' के घोटुल में प्रथम मिलन से प्रारम्भ होती है।

शोध विस्तार– प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने 'गढ़ बंगाल' और 'बिंझली' के घोटुलों के माध्यम से आदिवासियों की सामाजिक स्थिति का चित्रण किया है। इनके पिछड़े जंगली जीवन तथा उसमें नवयुवक और नवयुवतियों के स्वतंत्र मिलन की छूट तथा नारायणदेव का पर्व–'लाडूकाज' फरवरी में मनाया जाने वाला घास बॉस, लकड़ी आदि काटने का त्यौहार काराणंडुम मार्च में महुआ का फुल बीनने का त्यौहार 'इरापूपांडुम' फसल आने के समय मनाया जाने वाला त्यौहार 'काडामरेंगा' आदि के चित्रण द्वारा 'बस्तर' के जन–जीवन का उल्लेख अत्यंत सुंदर ढंग से किया गया है। यहां के पचहतर प्रतिशत से भी अधिक निवासी आदिवासी है। उनके अपने रीति रिवाज है। उनकी अपनी संस्कृति है। उनकी अपनी मूल्यताएँ है। यहां के निवासी शहरी सभ्यता से काफी दूर है, और उन्होंने अपनी प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर को अछूते कौमार्य की भांति सुरक्षित रखा है। अवस्थीजी ने अंचल की संस्कृति के चित्रण को अपना लक्ष्य बनाया है। अवस्थी का अंचल विशिष्ट संस्कृति से सम्पन्न है जिसका उद्घाटन कार्य ही अपने आप में एक बड़ी उपलब्धि हैं।[1]

आदिवासी जीवन को केन्द्र में रखकर जो साहित्यकार साहित्य सृजन करता है, उसने आदिवासी समाज के बीच जीवन जिया होता है। यदि जीवन जिया न हो तो भी उसने कम–से–कम उस आदिवासी जीवन को निकट से देखा हो, परखा हो तब जाकर वह एक सफल रचनाकर बन सकता है। जो रचनाकर अपने समाज के परिवेश को वर्णित करना चाहता है तो वह स्वयं अपने परिवेश को लेकर ही रचना में उतरता है, किन्तु रचनाकार दूसरे समाज का परिवेश वर्णित करना चाहे तो उसके लिए यह कार्य अति कठिन बन जाता है। वह जिस समाज का परिवेश प्रस्तुत करना चाहता है उस समाज के व्यक्तियों के पास जाकर उनके साथ बात– चीत करता है। इन पात्रों का अपने पर विश्वास जगाता है। विश्वास के कारण वहीं पात्र अनायास ही अपने समाज की समस्याऐं, वहां के संबंधों, वहां के रीति–रिवाज, परम्परायें, उनकी प्रगति–दुर्गति, अपने समाज अच्छी–बुरी बातें रचनाकार के सामने उगल देते है। उन बातों का रचनाकार अनुभव करता है। जिससे जनजातीय (प्रदीय) साहित्य लिखा जाता है।[2] ऐसे जनजातीय रचनाकारों में राजेन्द्र अवस्थी का नाम लिखा जाता है।

राजेन्द्र अवस्थी का **'जंगल के फूल'** उपन्यास बस्तर के 'गोंड' आदिवासी जीवन को केन्द्र बनाकर लिखा गया एक सशक्त जनजातीय उपन्यास है। उपन्यास की कथाभूमि बस्तर जिले का गढबंगाल गांव है। जिसमें अधिकतर गोंड़ आदिवासी बसते है। गोंड बिल्कुल अलग किस्म के लोग होते है। उनके रीति–रिवाजों, परम्पराओं, सामाजिक संबंधों, मान्यताओं आदि को देखकर हम उनके प्रति सहानुभूति से भर जाते है। गोंडों का इतिहास कुछ अनेखा इतिहास है। वह अपने आपको आदिम जाति के बताकर शिव–पार्वती को अपना वंशज मानते है।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

बस्तर के आदिवासियों की सामाजिक, सांस्कृतिक विरासत की पीढ़ी–दर– पीढ़ी आगे बढ़ाने में 'घोटुल' की महत्वपूर्ण भूमिका है। वह आदिवासी युवक और युवतियों के जीवन का एक आवश्यक अंक है। शायद बस्तर से बाहर बसे हुए लोगों को 'घोटुल' एक अजीब और चौंकाने वाला अजुबा लगता है। हरेक गांव का 'घोटुल' मानों कि एक प्रकार का 'कुमारगृह' है। 'घोटुलगृह' सामान्यः लड़की, मिट्टी, घास से निर्मित किये जोते है। घोटुल गृह के सामने ही लकड़ी के खंभों पर घास अथवा खपरैल की दत से बना एक माण्ड़ा होता है। 'घोटुलगृह' की सीमा को लकड़ी की बाढ़ से घेर दिया जाता है। घोटुल गृह की सीमा में ही एक लम्बा चौड़ा समतल आंगन होता है। इसी आंगन के बीचों–बीच घोटुल खंभ स्थापित किया जाता है, जिसके चारों ओर घूम–घूमकर घोटुल के नृत्यगीत सम्पन्न होते है। 'माँ–बाप' से अलग रहने लायक तथा विवाह होने तक के युवक–युवतियॉ घोटुल जाते है। विवाहित लोगों का घोटुल में प्रवेश वर्जित है। सूर्यास्त होने के बाद झोरिया द्वारा घोटुल का कोना–कोना साफ किया जाता है। रात होते ही घर का सारा कामकाज निपटाने के बाद गांव के युवक और युवतियॉ बगल में गीकी (चटाई) दबाए घोटुल पहुंचने लगते है।[3]

अवस्थी जी लिखते हैं–'पहले पहुंचने वाला देर से आने वाले दूसरे साथी का द्वार पर स्वागत करता है। दूसरा तीसरा का, तीसरे चौथे का। बस। यही क्रम चलता रहता है। लड़कियों को श्रृंगार देखते बनता है। दिनभर वे आवारा भले ही रहें, रात को वे लगन से संवरती है। बालों में प्यार से लहरियाँ डालती है' और लकड़ी की कधियाँ खोसती है। ये कंधियाँ अपने प्रेमी द्वारा दी गई प्रेम की निशानी होती है। इन लड़कियों को यह सब कभी खरीदना नहीं पड़ता। उनके गले में रंग–बिरंगी मालाएँ, लटकती रहती है। कभी–कभी मालाओं से पूरा गला भर जाता है। अलग–अलग आभूषणों से सज–धज कर अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक विरासत को प्रदर्शित करते है। तो दूसरी तरफ गांव की झोंपड़ियों में जो धोटुल में अनुपस्थित तीन–चार साल से कम उम्र के लड़के– लड़कियाँ रह जाती है या पति–पत्नी। शेष सारे युवक युवतियाँ घोटुल में ही रात बिताते है।[4]

भारतीय आदिवासी समाज में जाति–व्यवस्था को प्राधान्य दिया जाता है। ग्रामीण समाज की जाति व्यवस्था की तुलना में आदिवासी समाज की जाति व्यवस्था बिलकुल भिन्न प्रकार की होती है। उनकी पारिवारिक रचना और उत्तराधिकार की व्यवस्था में भी महत्वपूर्ण अन्तर पाया जाता है। भारत के अधिकांश भागों के आदिवासी समूहों में पुरूष की प्रधानता है और इनमें उत्तराधिकार का निर्णय पिता की पंक्ति में होता है। इसके विपरीत दक्षिण और उत्तर–पूर्व में उत्तराधिकार का निर्णय माता की पंक्ति में होता है, और पारिवारिक गठन मातृप्रधान होता है। आदिवासी लोग समूह में मिलकर काम करते है। वैसे तो उनकी जाति व्यवस्था को बाहर से देखने से तो पता नहीं चलता किन्तु गहराई में जाकर देखे तो पता चलेगा कि उनके जातिगत प्रबंध बड़े कठिन और अनुशासित होते है। उनके जातिगत प्रबंधों को तोड़ने वाले को कड़ी से कड़ी सजा दी जाती है अथवा समाज में बहिष्कृत किया जाता है। विवाह के इच्छित रूपों में भी अलग–अलग समुदायों में अलग–अलग निर्णायक व्यवस्थाएँ पायी जाती है। यदि कोई युवती अपनी यौवनावस्था के आरम्भ में किसी विधर्मी अथवा विजातीय युवक के साथ यौन संबंध स्थापित करे और यहीं बात अपने समाज को पता चले तो समाज उस युवती एवं उसके माता–पिता को जाति से निकाल देते है। अथवा तो समाज के साथ उसका हुक्का–पानी बंद कर देते है।[5]

'जंगल के फुल' उपन्यास में कुछ ऐसे ही जातिगत प्रबंधों पर प्रकाश डाला गया है। उपन्यास की आदिवासी गोंड युवती झिरिया–विजातीय युवक से प्रेम करती है। उसके प्रेम को लेकर गांव वाले विरोध करते है। गांव वालों का विरोध होने पर भी वह प्रेम करती रहती है, और अंत में प्रेम के लिए ही वह मर जाती है और चुड़ैल बनकर रातभर गांवभर को सताती रहती है। इस बात को लेकर गांव वाले कहते है–'गांव के बूढ़े जमाने को कोसते रहे। कहते, कैसा जमाना लग गया है। पिरेम की तो लगाम टूट गयी है। ऐसा बेलगाम पिरेम हमने नहीं देखा। हमने धूप में थोडे बाल सफेद किए है। बूढ़े रास्ता बनाते है। पर इन जवानों को देखों, सावन के अंधे बने है। परजात से ब्याह करने चली थी वह। सब कुछ सुना था उसने फिर भी गलत कमा किया और उसे रोका तो सारे गांव के लिए मुसीबत बन गयी है।'[6]

गोंड़ आदिवासी समाज की सामाजिक एवं धार्मिक व्यवस्था को संचालित करने के लिए परमेश्वर स्वरूप 'गायता' गांव का मुख्य एवं सामाजिक रूप से प्रतिष्ठितक व्यक्ति होता है। वह गांव पर अपना अधिकार जताता है। गायता को अत्यंत श्रद्धा और सम्मान के साथ देखा जाता है।

भारतीय आदिवासी समाज में यौन संबंधों की विधिवत स्थापना करने के लिए शिष्ट समाज की भांति विवाह संस्था का प्रचलन है। आदिवासी समाज में विवाह संबंधी नाना प्रकार की प्रथाएँ प्रचलित है। जिसका हिन्दी के आदिवासी जीवन केन्द्रित उपन्यासों में वर्णन मिलता है।[7] 'गोंड़' आदिवासियों में विवाह संबंधी लमसेन, दूध लौआना, तम्बाकु मांगना, तम्बाकु नहीं बांटना, कंची मांगना, चावलों का मिलना तथा बांस सुराही आदि प्रथाएँ प्रचलित है।

प्रस्तुत उपन्यास में 'लमसेना' रखने की प्रथा भी प्रस्तुत हुई है। 'लमसेना' रखने की प्रथा में सम्पन्न लड़की का पिता किसी अच्छे लड़के को अपने घर रख लेता है। लड़के का खाना–पिना, रहना आदि लड़की के घर में होता है। बदले में लड़का लड़की के पूरे परिवार की देखभाल और सेवा करता है। लड़का चाहता है कि उसकी सेवा से लड़की का परिवार प्रसन्न रहे क्योंकि जब तक लड़का लड़की के परिवार को प्रसन्न नहीं कर पाता तब तक लड़की की शादी उस लड़के

के साथ नहीं होती। लड़का लड़की के परिवार को प्रसन्न करने के लिए जितना समय लड़की के घर में रहता है उतने समय के लिए लड़के को 'लमसेना' कहा जाता है।

'बांस की सुराही' नामक प्रथा में युवक द्वारा थोंडी में शराब लेकर किसी युवती के घर आया जाया जाता है और युवती के सामने प्रेम जताता है युवती उसे स्वीकार कर ले तो मानों कि उसका प्रेम संबंध हो गया और स्वीकार न करे तो मानो कि वह प्रेम संबंध से जुड़ना नहीं चाहती। उपन्यास का पात्र गुबरी थोंडी में शराब लेकर जलिया के घर पहुंचता है। वहां जलिया गुबरी को देखकर आश्चर्य चकित रह जाती है। क्योंकि वह झालर सिंह से प्रेम करती है। गुबरी जलिया को मनाता हुआ जलिया से तम्बाकु मांगता है। तम्बाकु मांगने का अर्थ भी यही होता है कि, वह जलिया से शारीरिक संबंध जोड़ना चाहता है।[8]

उपर्युक्त प्रथाओं के अलावा 'कंघी मांगना की प्रथा' जिसमें युवक अथव युवती द्वारा प्रेम का निमंत्रण होता है। 'चावलों का मिल जाना' की प्रथा में शादी सम्पन्न होने का संकेत है। इस प्रकार 'जंगल के फुल' उपन्यास में गोंड़ आदिवासी समाज की विवाह संबंधी प्रथाओं का निरूपण हुआ है।

हिन्दी के आदिवासी जीवन–संबंधी उपन्यास साहित्य में भारतीय आदिवासी समाज की यौन संबंधों की स्थापना संबंधी मान्यताओं का चित्रण मिलता है। कुछ आदिवासी समाज में पुरूष द्वारा महिलाओं को वैश्या बनाकर घन अर्जित किया जाता है। तो कुद आदिवासी समाज में नवयुवक अथवा नवयुवतियों को अपनी ही जाति में स्वच्छन्दतापूर्वक यौन संबंध स्थापित करने की स्वतंत्रता प्राप्त होती है, किन्तु मानों कि अपनी जाति की युवती विजातीय युवक के साथ यौन संबंध स्थापित करे और युवती के समाज को पता चले तो उस युवती का समाज युवती एवं उसके माता–पिता को अपने समाज से बहिष्कृत कर देता है।[9]

मनुष्य सामाजिक प्राणी है, उसने अपनी रति संबंधी एवं पैतृक मूल प्रवृतियों के कारण अपना अकेलापन त्यागकर पारिवारिक जीवन अपनाया। बाद में उसकी सामाजिक भावना बढ़ती रही। वह समाज से जुड़कर अपना विकास करता रहा। पूरा मानव जीवन समाज से जुड़ा हुआ है। उपन्यास में भी व्यक्ति या समाज का चित्रण होता है। अतः कहना अनुचित न होगा कि उपन्यास प्रमुखतः समाज से संबंधित होता है, उसका स्वरूप सामाजिक होता है। 'सामाजिक उपन्यास समाज के गठन का सामाजिक मूल्यों का तथा सामाजिक समस्याओं की पारस्परिक क्रिया प्रतिक्रिया का चित्रण करता है।'[10] साहित्य समाज का दर्पण होता है। इसलिए सभी उपन्यासों में सामाजिक तत्व का पाया जाना उचित है। अगर ऐसा न हो तो उपन्यास अपनी उपयोगीता ही खो बैठेगा।

उपन्यासों में सामाजिक समस्याएँ अनेक होती है। इसलिए उपन्यासों में चित्रित समाज का दायरा बहुत बड़ा भी हो सकता है, परन्तु 'अधिकतर उपन्यासकार व्यक्ति और समाज की तत्कालीन समस्या पर ही अधिक गौर करना पसन्द करते है। क्योंकि जितना विषय छोटा उतना ही वह मार्मिक विवेचन कर सकता है। सामाजिक उपन्यासों के लोकप्रिय विषय निम्नांकित हो सकते हैं–संयुक्त परिवार और उनकी समस्याएँ, वर्ग–भेद, धार्मिक आड़म्बर, पारिवारिक जीवन की विषमताएँ, रूढ़ियाँ के संदर्भ में उत्पन्न पारिवारिक और वैयक्तिक समस्याऐं, बाल–प्रौढ़ तथा अनमेल विवाह के कुपरिणाम, विधवा समस्या, दाम्पत्य जीवन के शत्रु, स्वच्छंद प्रेम और उससे उत्पन्न परिस्थितियों तथा अन्य सामाजिक बुराइयों के कारण उत्पन्न विषमताएँ।'[11]

निष्कर्ष– सामाजिक विषमताओं, भ्रष्टाचारों तथा वैयक्तिक स्वार्थों से आक्रांत, पीड़ित समाज की दयनीय परिस्थितियों को उनके वास्तविक रूप में समाज के सामने प्रस्तुत करना सामाजिक उपन्यासों का प्रमुख मकसद है। सामाजिक उपन्यास केवल समाज जैसे है वैसा ही उसका वर्णन मात्र नहीं करता बल्कि उसे इस रूप में प्रस्तुत करता है कि जिससे पाठक अपने युग के सत्य एवं समाज में होने वाले कार्य व्यापारों के औचित्य तथा अनौचित्य को सरलता से परख सके और उन मर्यादाओं का अनुसरण कर सके जिन पर चलकर एक आदर्श समाज की स्थापना हो सके। सामाजिक उपन्यासों में मात्र आदर्शवादी चित्रों के ही दर्शन नहीं होते बल्कि उनमें समाज की वास्तविकता को ही अधिक से अधिक स्पष्ट करने का प्रयास किया जाता ळें

संदर्भ सूची–

1. वंदना टेटे, आदिवासी साहित्य, परम्परा और प्रयोजन, पृ. 09
2. वहीं, पृ. 10
3. राजेन्द्र अवस्थी, 'जंगल के फूल', पृ. 03
4. वहीं, पृ. 13
5. मोहन सव्हाण, आदिवासी साहित्य, पृ. 47
6. राजेन्द्र अवस्थी, 'जंगल के फूल', पृ. 25
7. मोहन सव्हाण, आदिवासी साहित्य, पृ. 50
8. राजेन्द्र अवस्थी, 'जंगल के फूल', पृ. 29
9. केदार प्रसाद मीणा, आदिवासी समाज, साहित्य और राजनीति, पृ. 63
10. वहीं, पृ. 65
11. वंदना टेटे, आदिवासी साहित्य, परम्परा और प्रयोजन, पृ. 18

RRIJM 2015, All Rights Reserved